चिरंतनाचार्यविरचितं

पञ्चसूत्रकम्

महर्षि **चिरंतनाचार्य** कृत **पंचसूत्र** और उसकी आचार्य **श्री हरिभद्रसूरि** कृत टीका, दोनों ही अनुपम, अलौकिक है. जीव की अत्यंत प्रारंभिक कक्षा से ले कर अध्यात्म जगत के सर्वोच्च शिखरों को सर करने का 'अत्यंत प्रभावी' मार्गदर्शन इसमें दिया हुआ है. प्रभावी यानी प्रभावी! बताई प्रक्रिया को बताए ढंग से करो और क्रमशः परिणाम आएगा ही... और आस्था दृढ़ होती चली जाती है.

यूँ तो पांचों के पांच सूत्र (अध्याय) अलग अलग भूमिका के लोगों के लिए अपनी-अपनी विशेषताएँ लिए हुए हैं, फिर भी **पाप-प्रतिघात-गुणबीजाधान** नाम का प्रथम सूत्र तो गज़ब का है. खास कर प्रारंभिक कक्षा के जीवों के लिए, और उसमें भी आज के तनाव, भय व कटुता के संक्लेशों से भरे अशांत जीवों के लिए तो यह सूत्र वाकई अमृत रस का काम करता है.

इस सूत्र की सबसे बड़ी खासीयत यह है कि यह मात्र सतही स्तर पर ही परिवर्तन, शांति व आनंद नहीं लाता, किंतु ठेठ जड़ों तक जा कर गहराई से काम करता है, और हमेशा के लिए जीव की योग्यता को ही बदल कर धर देता है. यह मात्र तात्कालिक इक्का-दुक्का परिणामों तक काम नहीं करता, परंतु अंतिम परिणति तक की, परिणामों (results) की सारी परंपरा को ही, जीव की योग्यता को पलटने के माध्यम से, नियंत्रित कर देता है. मात्र अशुभ कर्मों को ही नहीं पलटता, बल्कि जिनकी वजह से जीव अनंत बार दुःख पाता है वैसे अशुभ अनुबंधों को भी पलट देता है.

और यही इसकी अनन्य खासीयत है, जो इसे बिल्कुल अलग कक्षा में ले जाती है. बड़ी दुर्लभ है यह प्रक्रिया! और सरल भी इतनी ही है. सोने में मानो सुगंध...

जहाँ हमारा सामर्थ्य व पुण्य कम पड़ता हो वहाँ शक्तिशाली व पुण्यवान का आसरा बड़ा काम आता है. अरिहंत आदि चार का शरण यही काम करता है. हमारे सारे दुःखों की जड़ है **पाप में खुशी व पाप की रूचि.** जीव को इन्हीं की आदत अनादि से है. इन्हीं से पाप का बंध व अनुबंध दोनों ही होते रहते

है. उपाय है **पाप में नाखुशी व पाप की अरूचि,** और यह शक्य बनता है प्रभु के शरण में रह कर बार-बार की गई दुष्कृत गर्हा से. तो, दूसरी ओर हमारे सभी सुखों की वज़ह है **सुकृतों में खुशी व सुकृतों की रूचि.** जीव को आदतन यह अनुकूल नहीं. अतः पुण्य व पुण्यानुबंध दोनों का ही दुष्काल बना रहता है.

उपाय है जगत के सभी जीवों के सुकृतों की भाव से सेवना, अनुमोदना... प्रभु की ही शरण में रह कर बार-बार की गई सुकृत अनुमोदना हमारे संस्कारों को पलट कर रख देती है, जीव की योग्यता को पलट कर रख देती है. अब जीव शुद्ध धर्म की प्राप्ति के लायक बनता है, और अब सही मायनों में दुःखमुक्ति व सुखप्राप्ति की जीव की यात्रा प्रारंभ हो सकती है. शुद्ध धर्म हेतु योग्यता की प्राप्ति, यही जीव की सबसे बड़ी उपलब्धि है. योग्यता के बिना भी जीव को कहने को तो धर्म मिलता रहा है, लेकिन वह अपना प्रभाव नहीं बता सका.

चार शरण, दुष्कृत गर्हा व सुकृत अनुमोदना रूपी यह प्रक्रिया कैसे जीवंत व सफल बनाएँ वह रहस्य, वह प्रक्रिया भी 'प्रणिधान-प्रार्थना' व 'प्रणिधि शुद्धि' के तहत बड़े ही प्रभावी तरीके से बताई गई है. यह प्रक्रिया भी अपने आप में इस सूत्र को एक खास दरज्जा प्राप्त करवाती है. साधक की साधना में मानों यह गज़ब का प्राण भर देती है.

इस समग्र प्रक्रिया की **असरकारकता की चावी** सूत्र-पठन पारायण मात्र नहीं है, बल्कि **पूरी गहराई से, हृदय के तीव्र-तीव्रतम भावों से सूत्र के हर शब्द व वाक्य का बार-बार भावन है.**

इस प्रक्रिया से तात्कालिक फायदे भी बहोत लिए जा सकते है. जिस बात का संक्लेश सतत मन में रहा करता हो, जो दोष जीवन में अखरता हो, उसके निवारण के लिए सूत्र में बताए गए अरिहंत आदि के जो विशेषण उस दोष हेतु लागु पड़ते हो, जो बातें दुष्कृत-गर्हा की लागू पडती हो, और जो प्रतिपक्षी गुण अनुमोदना करने जैसे लगते हो, उन बातों को ही केन्द्र में रख कर, ज्यादा से ज्यादा भार दे कर यह प्रक्रिया बार-बार की जा सकती है. एक ही बेठक में यह प्रक्रिया तब तक भाव से दोहराते रहें जब तक कि मन में से वह संक्लेश शांत न हो जाय. **कृपया ध्यान रखें, कि मन के भीतर का संक्लेश अन्य बात है, एवं जिनकी वजह से संक्लेश जग रहा है, वे बाहरी संयोग अलग बात है. यह प्रक्रिया मुख्य रूप से मन के भीतर के संक्लेशों पर काम करती है.**

अशांति मन के भीतर ही है, जो सब से ज्यादा परेशान कर रही है. मन की अशांति हेतु हकीकत में बाहरी निमित्त बहोत कम या नगण्य प्रभाव धराते है, संस्कार व नजरिया ज्यादा असर धराते है. गहराई से सोचें! बात समझ में आ जाएगी. मन के शांत होते ही यह देखा गया है कि बाहरी संजोग असर होते चले जाते है, और कई बार तो वे पलट भी जाते है, या उनका फल पलट जाता है.

दुःख व संक्लेश मुक्ति की तरह जीवन में सुख व प्रसन्नता बढ़ाने के लिए भी इसी प्रक्रिया का उपयोग किया जा सकता है. इस हेतु अरिहंत आदि के इस तरह के गुणों एवं सुकृत अनुमोदना के उन अंशों पर ज्यादा भार देना होगा. अलग-अलग मनोदशाओं में अलग-अलग शब्द महत्त्वपूर्ण लगेंगे. नई-नई मंजिलों की यात्रा जारी रखें.

पठन व भावन की रीतः मूल व उसके साथ अर्थ को शांत-चित्त, एक-एक शब्द व वाक्य हृदय की संवेदनाओं को झंकृत करे, इस तरह धीरे-धीरे पढ़ें. एक बार अर्थ चित्त में भावित हो जाय, तब मात्र मूल का अर्थ जो कि अर्थ के बीच ही जरा बड़े व काले अक्षरों में दिया गया है, उसे पढ़ें, और उन भावों की स्पर्शना करें. एक अलग ही संवेदना होगी. आवश्यक लगे वहाँ विस्तृत अर्थ भी बीच-बीच में देख सकते हैं.

मूल प्राकृत शब्दों के साथ भी अर्थ को बैठाने का प्रयास करें. एक बार अर्थ बैठ जाय, फिर मात्र प्राकृत पाठ से ही मन को भावित करने का प्रयास करें. आनंद अलग ही होगा. अर्थ चिंतन-भावन के समय बीच-बीच में खुद के अंदर से भी यदि कोई भाव-संवेदन उठते हैं, तो उनका भी संवेदन कर के आगे बढ़ें. आपके अंतःकरण की जो पुकार होगी वैसे आप आगे बढेंगे. सौंप दे अपने आप को अरिहंत आदि के अचिन्त्य सामर्थ्य के हवाले... इस सारी प्रक्रिया के हवाले... मार्गदर्शन, सहयोग मिलता चलेगा; पुरुषार्थ जारी रखें... हमारे लिए प्रभु की सदाकाल आज्ञा है पुरुषार्थ की.

प्रथमं पापप्रतिघात-गुणबीजाधानसूत्रम्

णमो वीतरागाणं सव्वण्णूणं देविंद-पूइयाणं जहट्ठिय-वत्थुवाईणं तेलोक्कगुरूणं अरुहंताणं भगवंताणं.

नमस्कार हो...

नमस्कार का भाव यह चाबी है. आगे के भगवंताणं तक के शब्द के साथ इसे बड़ी प्रबलता से जोड़ना है. शेष सारे सूत्र में प्रवेश में इससे सरलता रहेगी.

वीतरागों को... जो सभी तरह की आसक्तियों और नाराजगीयों से पूर्णतः मुक्त है, किसी बात के मजबूर नहीं;

सर्वज्ञों को... जो विश्व के जड़-चेतन सब की, हर बात की सभी सच्चाईयों को जानते है;

जिन्हें स्वयं को भी महासमर्थ व समृद्धिशाली असंख्य देव नमते है, वैसे **देवेन्द्रों से** परम उल्लास पूर्वक **पूजितों को**;

हर वस्तु को जैसी है वैसी ही - **यथास्थित बताने वालों को;**

तीन लोक के सही में हितकारी **गुरूओं को;**

अब पुनः नये जन्म का बंधन धारण नहीं करने वाले **अरुहंतों को;**

परम शक्ति, ऐश्वर्य और तेज को धारण करने वाले **भगवंतों को...**

नमस्कार हो... नमस्कार हो... नमस्कार हो...

जे एवमाइक्खंति– इह खलु अणाइजीवे, अणादिजीवस्स भवे अणादि-कम्मसंजोग-णिव्वत्तिए; दुक्खरुवे, दुक्खफले, दुक्खाणु-बंधे. १

मेरे **ये** परम हितकारी प्रभु **इस तरह से बताते हैं** कि,

१. इस जगत में **जीव** सच ही **अनादि काल से है**, हमेशा से रहा हुआ है.

२. **जीव के** तरह-तरह के जन्म-मरणमय **भव भी अनादि से है**.

३. जीव का यह भव-संसार **अनादि के कर्म संजोगों की वजह से है.**

और जीव की यह अवस्था भी हमेशा से–

४. **दुःखरूप रही है.**

५. **फल में भी दुःख** को ही देने वाली रही **है**.

६. **अनुबंध**– परंपरा में **भी दुःख ही** खड़ा करनेवाली रही **है.**

सच में देखे तो इस वक्त भी जीव की दशा ऐसी ही दुःख भरी है.

एयस्स णं वोच्छित्ती सुद्ध-धम्माओ. सुद्धधम्म-संपत्ती पावकम्म-विगमाओ. पावकम्म-विगमो तहा-भव्वत्तादि-भावाओ. २

कुछ उपाय? हाँ है. **इस दुःख का नाश है.**

कैसे? ज्ञान-दर्शन-चारित्र रूप **शुद्ध धर्म से.** हाँ! यह धर्म औचित्य के साथ सत्कार व विधिपूर्वक सतत सेवन करना होगा.

यह **शुद्ध धर्म मुझे** सही में **मिलेगा** कहाँ? अंदर से मिलेगा! बाहर से नहीं. कैसे? इस धर्म को ढँक कर बैठे विपरीत श्रद्धा व आचरण रूप मोहनीय नाम के **पापकर्म के विगमन से,** चले जाने से.

और, **पाप कर्मों का विगमन** होता है **तथा-भव्यत्व आदि भावों** के परिपाक से. (मोक्ष में जाने का जीव का स्वभाव यह भव्यत्व स्वभाव है, परंतु हर जीव के इस स्वभाव का परिपाक भिन्न-भिन्न प्रकार का होता है. जिसे तथा-भव्यत्व कहते है. काल, नियति– भवितव्यता, कर्म और पुरूषार्थ-प्रयत्न के परिपाक की भिन्नता के आधार पर तथा-भव्यत्व की भिन्नता तय होती है).

तस्स पुण विवागसाहणाणि-चउसरणगमणं, दुक्कड-गरिहा, सुकडासेवणं.

इस तथा-भव्यत्व **के भी विपाक**– परिपाक **के साधन है**...

१. इस साधना की सिद्धि में आने वाली आपदाओं के सामने रक्षण देने व आगे बढ़ने हेतु मार्गदर्शन, समर्थन देने में पूर्ण रूप से समर्थ ऐसे अरहंत, सिद्ध, साधु व जिन धर्म; इन **चार की शरण में गमन** करना.

२. स्वयं के इस जन्म व गत जन्मों के सभी **दुष्कृतों की** पाप व पापों की

अनुबंध-परंपरा को हटाने में अप्रतिहत-कभी निष्फल न जाय ऐसी, **गर्हा,** उनका एकरार.

३. सभी के **सुकृतों की,** अच्छाईयों की, जीव को कुशल व कल्याणकारी भावों के साथ अनुबंध करवाने में समर्थ ऐसी **अनुमोदना**.

अओ कायव्वमिणं होउ-कामेणं सया सुप्पणिहाणं, भुज्जो भुज्जो संकिलिसे, तिकाल-मसंकिलिसे. ३

अतः इन दुःखों से **मुक्ति की इच्छा वालों को यह** प्रक्रिया **सदा सुप्रणिधान वाले हो कर,** लक्ष्य व प्रक्रिया की पूर्ण एकाग्र चाहना वाले हो कर, चित्त के राग-द्वेष आदि **संक्लेश** वाली अवस्था **में बारंबार**– जब तक कि चित्त का संक्लेश शांत न हो जाय, और चित्त की **असंक्लेश** वाली अवस्था **में तीनों काल करने योग्य है.** ताकि तथा-भव्यत्व के परिपाक से शुद्ध धर्म प्राप्ति की योग्यता प्रकट हो सकें.

चार शरण

अरिहंत का शरण

जावज्जीवं मे भगवंतो परम-तिलोग-णाहा अणुत्तर-पुण्ण-संभारा खीण-रागदोसमोहा अचिंत-चिंतामणी भव-जलहि-पोया एगंत-सरण्णा अरहंता सरणं. ४

दुर्गति आदि सभी भयों के सामने सभी जीवों का रक्षण-पालन करने वाले होने से जो **तीनों लोक के परम नाथ हैं;**

सभी तरह की अनुकूलताओं की हितकारी प्राप्ति करवाने वाले **सर्वोच्च पुण्य के** असीम **भंडार हैं;**

राग, द्वेष व मूढ़ता जनक **मोह**-अज्ञान **जिनके समाप्त हो चुके हैं;** जो सभी मनोरथों को पूर्ण करने वाले है, व जिस सुख की कल्पना भी नहीं की जा सकती ऐसे मोक्ष सुख की प्राप्ति कराने वाले **अचिंत्य चिंतामणि** रत्न **हैं;**

जन्म-मरण रूप अनंत दुःखों से भरे **भव सागर में** अनेक तरह से पीड़ित हो रहे प्राणियों को सुरक्षित पार उतारने के लिए **पोत**-नौका **हैं;**

सभी आश्रितों का हमेशा हित ही करने वाले होने से **एकांत शरण लेने योग्य** है.

ऐसे **अरहंत भगवंत** मुझ असहाय के लिए **यावत्-जीवन–** जब तक जीवन है तब तक, **शरण हैं...** आश्रय हैं...

सिद्ध का शरण

तहा पहीण-जरामरणा अवेय-कम्मकलंका पणट्ठ-वाबाहा केवल-नाणदंसणा सिद्धिपुरवासी णिरुवम-सुह-संगया सव्वहा कयकिच्चा सिद्धा सरणं. ५

तथा, जिनके **जरा**– बुढ़ापा व **मरण** आदि **प्रक्षीण हो चुके हैं,** पूरी तरह नाश हो चुके हैं;

कर्मरूपी **कलंक**– कालिमा पूरी तरह **साफ** हो चुके होने से जिनकी सारी शक्तियाँ खिल उठी **हैं;**

जिनके पूर्ण सुख के बीच की सारी **बाधाएँ प्रनष्ट हो चुकी हैं;**

जो **केवलज्ञान** और केवल**दर्शन रूप हैं;**

लोक के सर्वोच्च भाग पर आए हुए **सिद्धिपुर** यानि मुक्ति के स्थाई रूप से **निवासी हैं;**

पराई वस्तुओं के संयोग से ही उत्पन्न होने वाले संयोगिक सुखों के साथ जिसकी कोई उपमा नहीं हो सकती ऐसे असंयोगिक **अनुपम सुख से** जो **संगत हैं,** युक्त **हैं**;

संसारी जीव के कार्य तो अनंत जन्मों में भी कभी पूरे नहीं हुए हैं, फिर भी करने योग्य सब कुछ जो **सर्वथा** कर चुके है, **कृतकृत्य हैं;**

ऐसे आत्मा की सर्वोच्च अवस्था को हमेशा के लिए पाए **सिद्ध भगवंत** यावत्-जीवन मेरे लिए **शरण हैं,** आश्रय **हैं**;

साधु का शरण

तहा पसंत-गंभीरासया सावज्जजोग-विरया पंचविहाया-यारजाणगा परोवयार-निरया पउमाइ-णिदंसणा झाणज्झयण-संगया विसुज्झमाण-भावा साहू सरणं. ६

जिन का **आशय**- मन के भाव **प्रशांत** है, (क्षमा के बल से जिसमें कभी कोई चंचलता नहीं आती) और सहज रूप से गहन-**गंभीर है** (कभी छलकते नहीं);

जो करण-करावण-अनुमोदन रूप मन-वचन-काया के सभी **सावद्य**-पाप **योगों से विरत है,** मुक्त है;

जो पूर्णरूप से **परोपकार में** ही **निरत है,** लगे हुए है;

कामभोगों से अलिप्तता व निर्मलता आदि के कारण जो **पद्म**-कमल, **शरद ऋतु के सरोवर** आदि से **तुलना प्राप्त है;**

जो एकाग्रता पूर्वक विशुद्ध **ध्यान** व शास्त्रों के **अध्ययन में लगे रहते हैं;**

आगमोक्त अनुष्ठानों के बल से जिनके हृदय के **भाव** मलिनता का त्याग कर निरंतर **विशुद्धता को पा रहे है,**

ऐसे सम्यग् दर्शन आदि के बल से सिद्धि को साधने वाले **साधु** भगवंत यावत्-जीवन **मेरे शरण है,** आश्रय है.

धर्म का शरण

तहा सुरासुर-मणुय-पूइओ मोहतिमि-रंसुमाली, रागदोस-विस-परममंतो, हेऊ सयल-कल्लाणाणं, कम्मवण-विहावसू, साहगो सिद्ध-भावस्स, केवलि-पण्णत्तो धम्मो जावज्जीवं मे भगवं सरणं. ७

जो अतिशक्तिशाली **सुर, असुर व मनुष्यों से पूजित हैं;**

जो जीव को गुमराह करनेवाले **मोह** रूपी **अंधकार** के नाश **के लिए सूर्य के समान हैं;**

जो आत्मशक्तियों का घात करने वाले **राग और द्वेष** रूपी महाखतरनाक

विषों के लिए (उन्हें हर हालत में पूरी तरह नाश करने वाले) **परम मंत्र** के समान **है;**

जो सुदेवता के रूप में जन्म आदि **सभी** प्रकार के **कल्याणों का हेतु है,** वजह है;

और जो जीव की सर्वोच्च परिणति रूप **सिद्ध-भाव का साधक है,** सिद्ध भाव को प्राप्त करवाने वाला है,

ऐसा **केवलियों के द्वारा प्ररूपित समग्र ऐश्वर्य आदि से युक्त** श्रुत आदि रूप **धर्म यावत्-जीवन मेरे लिए शरण है,** आश्रय है.

दुष्कृत गर्हा

सरण-मुवगओ य एएसिं गरिहामि दुक्कडं–

अरहंत आदि **इन** चारों **की शरण में रहा हुआ** मैं अब मेरे समग्र **दुष्कृतों की,** खराब कार्यों की **गर्हा करता हूँ,** एकरार करता हूँ, अंदरूनी असहमति व्यक्त करता हूँ.

जण्णं अरहंतेसु वा, सिद्धेसु वा, आयरिएसु वा, उवज्झाएसु वा, साहूसु वा, साहुणीसु वा, अन्नेसु वा धम्मट्ठाणेसु माणणिज्जेसु पूयणिज्जेसु,

मैंने अरहंतों के प्रति, सिद्धों के प्रति, आचार्यों के प्रति, उपाध्यायों के प्रति, साधुओं के प्रति, साध्वियों के प्रति, सामान्य से गुणों में अधिक ऐसे **धर्म के स्थानरूप** (जिनके हृदय में धर्म का वास है ऐसे) **जीवों के प्रति, माननीय जनों के प्रति, पूजनीय लोगों के प्रति** जो भी दुष्कृत किये है;

तहा माईसु वा, पिईसु वा, बंधूसु वा, मित्तेसु वा, उवयारीसु वा, ओहेण वा जीवेसु, मग्ग-दि्ठएसु, अमग्ग-दि्ठएसु, मग्ग-साहणेसु, अमग्ग-साहणेसु,

तथा अनेक जन्मों के **माताओं के प्रति, पिताओं के प्रति, बंधुओं के**

प्रति, मित्रों के प्रति, उपकारियों के प्रति, सामान्य से सम्यग् दर्शनादि को पा कर मोक्ष**मार्ग पर रहे हुए जीवों के प्रति,** मिथ्यात्व आदि की वजह से जो मोक्ष**मार्ग से बाहर स्थित** है ऐसे **जीवों के प्रति,** पुस्तक आदि मोक्ष**मार्ग के साधनों के प्रति,** हथियार आदि **उन्मार्ग के साधनों के प्रति;**

जं किंचि वितह-मायरियं अणायरियव्वं अणिच्छियव्वं पावं पावाणुबंधि सुहमं वा बायरं वा मणेण वा वायाए वा काएण वा कयं वा कारियं वा अणुमोइयं वा रागेण वा दोसेण वा मोहेण वा, एत्थ वा जम्मे जम्मंतरेसु वा,

जो कोई भी स्व-पर अहितकारी **विपरीत आचरण किये है, जो कि आचरण करने योग्य नहीं** थे, **चाहने योग्य** भी **नहीं थे,** जो पाप का कारण होने से स्वयं **पाप थे,** पापों की ही रूचि से जन्मे होने के कारण पापों की लंबी परंपरा चलाने वाले **पापानुबंधी** आचरण **थे;**

फिर भले ही वे **सूक्ष्म**– झट से ध्यान में न आने वाले **थे या बादर**– स्पष्ट पता चल जाने वाले **थे; मन से, वचन से या काया से;** स्वयं **किये थे,** औरों से **करवाये थे,** या औरों की **अनुमोदना स्वरूप थे; राग से या द्वेष से या मोह से** किये थे; **इसी जन्म में** किये थे **या पिछले जन्मों में** किये **थे;**

गरहियमेयं दुक्कडमेयं उज्झियव्वमेयं, विआणियं मए कल्लाणमित्त-गुरुभयवंत-वयणाओ,

वे सब मेरे आचरण **गर्हित**-निंदित, जुगुप्सित **थे;** धर्मबाह्य होने से वे सारे के सारे **दुष्कृत,** गलत कार्य **थे; अतः त्यागने**-छोड़ देने **योग्य है,** ऐसा **मुझे** मेरे **कल्याण-मित्र गुरूभगवंत के वचनों से पता चला है.**

एवमेयं ति रोइयं सद्धाए, अरहंत-सिद्ध-समक्खं गरहामि अहमिणं दुक्कडमेयं उज्झियव्वमेयं

'यह सब ऐसा ही है' इस तरह मुझे निर्मल **श्रद्धा से** दिल में **रुचा है,**

और **अरहंत व सिद्ध प्रभु के** अनंतज्ञान की साक्षी में मानों साक्षात् उनके ही **समक्ष मैं इन सब की गर्हा**-एकरार **करता हूँ कि मेरे ये सारे के सारे** आचरण वे गलत थे, खराब कार्य थे, **दुष्कृत थे, त्यागने योग्य थे.**

एत्थ मिच्छामि दुक्कडं, मिच्छामि दुक्कडं, मिच्छामि दुक्कडं. ८

इन सब का...

मिच्छामि दुक्कडं

मिच्छामि दुक्कडं

मिच्छामि दुक्कडं.

ये सब मेरे दुष्कृत मिथ्या हो जाय, निष्फल हो जाय, उनका अस्तित्व न रहें.

होउ मे एसा सम्मं गरहा. होउ मे अकरणनियमो.

१. **मेरी यह** गर्हा **सम्यक् गर्हा हो,** भाव से सच्ची गर्हा हो.

२. इसी गर्हा की वजह से मुझे इन सब दुष्कृतों के पुनः **अकरण का,** न करने का **नियम हो जाय.**

बहुमयं ममेयं ति इच्छामि अणुसट्ठिं अरहंताणं भगवंताणं गुरुणं कल्लाण-मित्ताणं ति.

इन दोनों बातों **का मुझे बहुत ही मान है. इसीलिए मैं अरहंत भगवंतों व कल्याणमित्र गुरूओं का** (उपरोक्त दोनों बातों को उत्पन्न करने वाले बीज के समान, ऐसा) **अनुशासन चाहता हूँ.**

प्रणिधान - प्रार्थना

होउ मे एएहिं संजोगो. होउ मे एसा सुपत्थणा. होउ मे एत्थ बहुमाणो. होउ मे इओ मोक्खबीयं. ९

मेरी हार्दिक प्रार्थना है कि

मुझे इन अनुशासकों **का संयोग हो.**

मेरी यह प्रार्थना, **सुप्रार्थना हो,** दोष रहित व अवश्य फल देने वाली हो.

मेरा इस प्रार्थना **के प्रति** अंतःकरण से **बहुमान हो.**

और **इसी** प्रार्थना के बल **से मुझे** परंपरा में अवश्य फलने वाले ऐसे कुशलानुबंधी कर्मरूप उत्तम **मोक्षबीज की प्राप्ति हो.**

पत्तेसु एएसु अहं सेवारिहे सिया, आणारिहे सिया, पडिवत्ति-जुत्ते सिया, निरइआर-पारगे सिया. १०

एवं **इन** अरंहत, गुरू आदि **की प्राप्ति होने पर...**

मैं उनकी **सेवा के योग्य होऊँ;**

मैं उनकी **आज्ञा के योग्य होऊँ;**

मैं उनकी उन सभी आज्ञाओं की **प्रतिपत्ति से,** स्वीकृति से **युक्त बनुँ**- आज्ञाओं को जीवन में स्वीकारने वाला बनुँ... स्वीकारी हुई उन आज्ञाओं को **अतिचार रहित** पूरी तरह **पालने वाला बनुँ...**

सर्व गुणों व योग्यताओं के लिए बीजसमानः सुकृत अनुमोदना संविग्गो जहासत्तीए सेवेमि सुकडं. (ति)अणुमोएमि सव्वेसिं अरहंताणं अणुट्ठाणं, सव्वेसिं सिद्धाणं सिद्धभावं, सव्वेसिं आयरियाणं आयारं, सव्वेसिं उवज्झायाणं सुत्तप्पयाणं, सव्वेसिं साहूणं साहुकिरियं,

संविग्न–मोक्षाभिलाषी **बना मैं शक्ति अनुसार सुकृतों की सेवना करता हूँ.**

मैं मेरे हृदय की चाहना व प्रसन्नता से भरी **अनुमोदना करता हूँ...**

सभी अरहंतो के धर्मदेशना आदि सर्व हितकारी **अनुष्ठानों की;**

सभी सिद्धों के अव्याबाध आदि रूप **सिद्धभाव की;**

सभी आचार्यों के ज्ञानाचार आदि रूप निर्मल-सुंदर **आचार** धर्म **की;**

सभी उपाध्यायों के विधिपूर्वक आगम आदि **सूत्रों के दान की;**

सभी साधुओं की स्वाध्याय, ध्यान आदि रूप **साधु-क्रिया की;**

सव्वेसिं सावगाणं मोक्ख-साहण-जोगे, एवं सव्वेसिं देवाणं सव्वेसिं जीवाणं होउ-कामाणं कल्लाणा-सयाणं मग्ग-साहण-जोगे. ११

सभी श्रावक-श्राविकाओं के वैयावृत्यादि रूप **मोक्ष को साधने वाले योगों की;**

और इंद्र आदि **सभी देवताओं के,** सामान्यतः मोक्ष की चाहना वाले आसन्न-भवी - शीघ्र मोक्षगामी, व कल्याणमय शुद्ध आशय वाले **सभी जीवों के** सामान्यतः हितकारी-कुशल प्रवृत्तिरूप मोक्ष**मार्ग को साधने वाले,** प्राप्त कराने वाले **योगों की;**

जगत में जो कुछ भी अनुमोदनीय है उन सब की मैं यथार्थ भाव से अनुमोदना करता हूँ.

प्रणिधिशुद्धि

होउ मे एसा अणुमोयणा सम्मं विहिपुव्विगा, सम्मं सुद्धासया, सम्मं पडिवत्तिरुवा, सम्मं निरइयारा, परमगुणजुत्त-अरहंतादि-सामत्थओ.

मेरी यह अनुमोदना...

शास्त्रों में बताई गई **सम्यक् विधि पूर्वक की हो,**

बाधक कर्म-मल से रहित ऐसी **सम्यक् शुद्ध आशय वाली हो,**

जीवन में आचरण रूप **सम्यक् प्रतिपत्ति**-स्वीकार **वाली हो,**

सही रूप से पालन की गई होने से **सम्यक् निरतिचार**- दोषरहित **हो...**

मेरी शक्ति तो बड़ी सीमित है अतः **परम गुणों से युक्त अरिहंत आदि के सामर्थ्य से** मेरी अनुमोदना उपरोक्त प्रकार की **हो...**

अचिंत-सत्तिजुत्ता हि ते भगवंतो वीयरागा सव्वण्णू परम-कल्लाणा परम-कल्लाण-हेऊ सत्ताणं.

अहा! **अचिंत्य शक्ति से युक्त वे** अरहंत आदि **भगवंत वीतराग है,**

सर्वज्ञ है, परम कल्याणरूप है व **जीवों के लिए** उचित उपायों के माध्यम से **परम कल्याण के हेतुरूप है.**

मूढे अम्हि पावे अणाइ-मोह-वासिए, अणभिण्णे भावओ हिया-हियाणं अभिण्णे सिया, अहिय-निवित्ते सिया, हिय-पवित्ते सिया, आराहगे सिया, उचिय-पडिवत्तीए सव्वसत्ताणं, सहियं ति इच्छामि सुक्कडं, इच्छामि सुक्कडं, इच्छामि सुक्कडं. १२

और मैं? **मैं तो मूढ़ हूँ, पापमय हूँ,** उपरोक्त सुंदर बातों को जीवन में उतारने के विषय में **अनादि काल से मोह वासित-** भ्रमित **हूँ.** अतः **भाव से-** सही मायनों में मैं **मेरे हित और अहित से अनभिज्ञ हूँ,** अनजान हूँ; अरिहंतादि के सामर्थ्य से **अब मैं जानकार बनुँ,** मेरे **अहित से** मैं **निवृत्त बनुँ, हित में** मैं **प्रवृत्त बनुँ;**

मैं **आराधक बनुँ- सभी जीवों की उचित प्रतिपत्ति से**, उन-उन जीवों की लायकात के अनुरूप सेवा से, स्वीकृति से; क्यूँकि **इसी में मेरा हित है, अतः मैं** तहेदिल **सुकृत की...**

चाहना करता हूँ

चाहना करता हूँ

चाहना करता हूँ.

सूत्र पाठ का फल

एवमेयं सम्मं पढमाणस्स सुणमाणस्स अणुप्पेहमाणस्स सिढिलीभवंति परिहायंति खिज्जंति असुह-कम्माणुबंधा.

इस विधि से संवेग के साररूप **इस** सूत्र **को** स्वयं सम्यक् **पढ़ने वाले के, सुनने वाले के** तथा अर्थ की गहराई में जा कर चिंतन करने रूप **अनुप्रेक्षा करने वाले के...**

अशुभ कर्मों के अनुबंध अपने फल देने की शक्ति में मंदता आ जाने की

वजह से **शिथिल हो जाते है;** उनका **ह्रास हो जाता है,** वे कम हो जाते है, और विशिष्ट हृदय-भावों के अभ्यास से उनका **नाश भी हो जाता है.**

निरणुबंधे वाऽसुहकम्मे भग्गसामत्थे सुह-परिणामेणं कडगबद्धे विय विसे अप्पफले सिया सुहावणिज्जे सिया, अपुणभावे सिया. १३

और साथ ही **अनुबंध रहित बने ये अशुभ कर्म** इस सूत्र की आराधना के प्रभाव से उनका **सामर्थ्य टूट जाने पर** आत्मा के **शुभ परिणाम** प्रकट होने **से कड़े से बाँधे हुए विष की तरह अल्प फल को देने वाले बनते हैं, सुखरूप** पूर्णतः नाश हो जाने वाले **बनते हैं,** और **फिर से नहीं बंधने वाले हो जाते हैं.**

इस तरह जीव की अनंत दुःखरूपता की सारी जड़ का नाश हो जाता है.

तहा आसगलिज्जंति परिपोसिज्जंति निम्मविज्जंति सुह-कम्माणुबंधा.

और, शुभ कर्मों के नए अनुबंध उत्पन्न होते हैं, वे कमजोर हो तो **पुष्ट-मजबूत हो जाते है** और अपने **निर्माण को** पूर्णतः **पाते है.**

साणुबंधं च सुहकम्मं पगिट्ठं पगिट्ठ-भावज्जियं नियम-फलयं सुप्पउत्ते विय महागए सुहफले सिया, सुहपवत्तगे सिया, परम-सुहसाहगे सिया.

सानुबंध शुभकर्म, इस प्रक्रिया से **प्रकृष्ट बने,** अपने श्रेष्ठतम सामर्थ्य वाले बने; **प्रकृष्ट शुभ भावों से अर्जित होने से अवश्य ही फल देने वाले बने हुए सुप्रयुक्त महा औषध की तरह शुभफल देने वाले बनते है,** अनुबंध के बल से **शुभ के** सतत **प्रवर्तक बनते है** और परंपरा में **परम सुख-** मोक्ष सुख के साधक बनते है, **देने वाले बनते है.**

अओ अप्पडिबंधमेयं असुहभाव-निरोहेणं सुहभाव-बीयं ति सुप्पणिहाणं सम्मं पढियव्वं सोयव्वं अणुप्पेहियव्वं ति. १४

अतः चउसरण आदि **यह** प्रक्रिया नियाणा-निदान की तरह आत्मकल्याण

में आगे बढ़ने में बाधक– प्रतिबंधक ऐसा फल देने वाली नहीं होने से **अप्रतिबंध**– अनिदान स्वरूप **है,** तथा **अशुभ भाव** यानि अशुभ अनुबंधों को **अटकाने के द्वारा शुभभावों के लिए बीजरूप है. ऐसा जान कर सुंदर प्रणिधान के साथ** यह सूत्र आत्मा के प्रशांत भाव से **सम्यक् पठन करने योग्य है, श्रवण करने योग्य है** एवं इसका **अनुप्रेक्षण**- अनुभावन करने योग्य है.

अंतिम मंगल

नमो नमिय-नमियाणं परमगुरु-वीयरागाणं. नमो सेस-नमोक्कारारिहाणं. जयउ सव्वण्णुसासणं. परमसंबोहीए सुहिणो भवंतु जीवा, सुहिणो भवंतु जीवा, सुहिणो भवंतु जीवा.

अन्य समर्थजन भी जिन्हें नमन करते हैं ऐसे देवेन्द्र, महा-ऋषि आदि **नमितों के द्वारा जो नमित है,** नमन किए गए हैं; **ऐसे परम गुरू वीतरागों को नमन,** कि जिनके सारे क्लेश नाश हो चुके हैं. अन्य भी **शेष नमस्कार योग्यों को–** आचार्य, गुणाधिक आदि **को नमन.**

सर्वज्ञों का शासन जय प्राप्त करें!

मिथ्यात्व के नाश पूर्वक **परम संबोधि–** सम्यक्त्व की प्राप्ति के **द्वारा...**

सभी जीव सुखी हो...
सभी जीव सुखी हो...
सभी जीव सुखी हो...

इति पावपडिघायगुणबीजाहाणसुत्तं समत्तं. १५(१)

पाप प्रतिघात-गुणबीजाधान नाम का प्रथम सूत्र समाप्त हुआ.